सम्पोषणीय शिक्षा – वर्तमान की अनिवार्य आवश्यकता
(Sustainable Education - The Compulsory Need of the Present)

डॉ0 अमित केसरवानी
पी–एच0डी0, समाजशास्त्र विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

शिक्षा जीवन के सर्वांगीण विकास हेतु अनिवार्य है। शिक्षा के बिना मनुष्य विवेकशील और शिष्ट नहीं बन सकता। विवेक से मनुष्य में सही और गलत का चयन करने की क्षमता उत्पन्न होती है। विवेक से ही मनुष्य के भीतर उसके चहुॅओर नित्य प्रति होते घटनाक्रमों के प्रति एक छिद्रान्वेषी दृष्टिकोण उत्पन्न होता है। शिक्षा ही मानव को मानव के प्रति मानवीय भावनाओं से पोषित करती है। शिक्षा से मनुष्य अपने परिवेश के प्रति जागृत होकर कर्तव्याभिमुख हो जाता है। इस लिए किसी भी राष्ट्र का वास्तविक विकास तभी हो सकेगा जब वहॉ के नागरिक शिक्षा की दरिद्रता में न जी रहें हों। अतः भारत के विकास के लिए भी यह एक अनिवार्य तथ्य है।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था का औपनिवेशक इतिहास व्यापक निरक्षरता के दलदल में मुट्ठी भर सुशिक्षित लोगों को पैदा करने की व्यवस्था का इतिहास रहा है। पूरे जिले भर के लिए एक कालेज और पूरे प्रदेश या कई प्रदेशों के बीच में एक विश्वविद्यालय । इससे शुरू 19वीं शताब्दी की आधुनिक भारतीय शिक्षा व्यवस्था आजादी के बाद जनतांत्रीकरण और राष्ट्रीयता; इन दो जरूरतों को पूरा करने के लिए लगातार सुधारी जाती रही है। लेकिन यह दुर्भाग्य की बात है कि उच्च शिक्षा को तो छोड दे, प्राथमिक शिक्षा का भी अधिकार देने में भारतीय शासक वर्ग को सात दशक लग गये। लेकिन देर आए दुरूस्त आए, आज शिक्षा एक मौलिक अधिकार बन चुका है जिससे लड़खड़ाती हुयी शिक्षा व्यवस्था में कुछ सुधार होते दिख रहा है परन्तु इतना काफी नहीं है कई अन्य मुद्दे अभी भी अनसुझी पहेली ही बनी हुई हैं। वर्तमान में हमारी समूची शिक्षा व्यवस्था को फिर से सुसंगठित करने का राष्ट्रवादी अभियान अपनाये जाने का बल दिया जाना चाहिए। इसलिए तीन आयामों में हमे भारतीय शिक्षा का राष्ट्रीय स्वरूप जनतांत्रिक और न्याायमूलक समाज संविधान के अनुकूल बनाना होगा।

प्रथम आयाम – प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर अच्क्षे स्कूलों की स्थापा

प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर अच्छे स्कूलों की स्थापा एक अनिवार्य तथ्य है क्योंकि बालक की शिक्षा की प्रकिया का प्रथम सोपान होता है यदि प्राथमिक स्कूलों की दिशा व दशा दुरूस्त होगी तो निश्चित रूप से वे ऐसे महापुरूषो को जन्म देंगे जो राष्ट्रनिर्माण मे अहम भूमिका अदा करेंगे। प्राथमिक शिक्षाा के काम को अच्छी तरह निभाने के लिए प्रतिबद्ध शिक्षकों की बड़ी सेना चाहिए। प्राथमिक शिक्षा को अभी देशी भाषा की दरिद्रता और अंग्रेजी माध्यम के आंतक का दोहरा मुकाबला करना पड रहा है। इसलिए शीघ्र ही सभी देशी भाषाओं को बच्चे को बुनियादी शिक्षा देने लायक साधन सम्पन्नता देनी होगी। और अंग्रेजी को पढाने की जिद कम से कम शुरू के पांच बरस के लिए छोडनी होगी । नहीं तो हमारे बच्चे अपनी मातृभाषा के मूल्य से वंचित होकर अंग्रेजी के अवैज्ञानिक आधार पर कुल मिलाकर रट्टू तोता और नकलची बंदर जैसे बनते रहेंगे। मौलिक चितंन और अनुसंधान की चुनौती इनके बस की नही रहेगी। हमें अपने रमण, रवीन्द्रनाथ, रामानुजम, रविशंकर और महादेवी वर्मा के लिए और लंबा इंतजार करना पडेगा।

द्वितीय आयाम – माध्यमिक स्तर पर ही हो रोजगारी शिक्षा का समावेश

माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर अब सूचना क्रांति और तकनीक क्रांति का अधिकतम समावेश वर्तमान की चुनौती होगी। इसे हर मायने में चीन और ब्राजील से होड करने के लिए तैयार होना चाहिए। माध्यमिक शिक्षा के तीन से पांच बरस के दौरान हर युवक युवती 15 से 17 बरस की उम्र के हो जाते है और यह समय रोजगारी शिक्षा बनाम उच्चतम शिक्षा के बीच चुनाव का होता है। अभी इस चयन के लिए हमारी शिक्षा व्यवस्था में कोई प्रोत्साहन नहीं है जबकि यूरोप और अमेंरिका में जिनसे आज हमारा मुकाबला है शुरूआती 12 बरस की पढाई के बाद रोजगारी शिक्षा का रास्ता स्वयं शिक्षा केन्द्र

सुलभ कराते है। इसके लिए माध्यमिक शिक्षा को क्षेत्रीय, आर्थिकी और रोजगार बाजार से जुडा बनाना पडेगा।

इसके लिए सभी बच्चों को माध्यमिक शिक्षा के केद्रीय परिषद के बुलडोजर के नीचे सपाट कर देने की जरूरत नही है कश्मीर की घाटियों में जो जरूरतें है, वह उत्राखंड और अरूणांचल प्रदेश की पहाडियों में गैरजरूरी मानी जाएंगी। इसी तरह समुद्री तट के इलाके के किशोर किशोरियों को ज्ञान अवसर चाहिए। वह गंगा जमुना के मैदान के गांव और कस्बों के लिए प्रायः अप्रसांगिक होता है। माध्यमिक शिक्षा के वर्षो में ही कला, संगीत, साहित्य और खेलकूद के लिए भी बच्चों को अवसर मिलना चाहिए। परिवार, विद्यालय और समाज को हमें इन उभरते हुए व्यक्तित्वों को बडी नरमीयत से गढना चाहिए।

तृतीय आयाम – मोटी कमाई की सड़क हो रही उच्च शिक्षा पर लगाम

पिछले 30 साल से हमने उच्च शिक्षा के खुला बाजारीकरण का दुस्साहस किया है। इसमें शिक्षा को बाद की जिंदगी में मोटी कमाई वाली सडक समझ लिया गया है। एक लाख से लेकर पचास लाख रूपये तक के प्रवेश शुल्क के साथ हम अपने बच्चों को देश विदेश में फैले हुए शिक्षा बाजार से डाक्टर, इंजीनियर, प्रबंधक, कंप्यूटर वैज्ञानिक आदि बनाकर पैसा कमाने वाली मशीन में बदलने में व्यस्त हो चुके है। शिक्षा के बाजारीकरण ने चौतरफा पैसा कमाने के लिए खाली वक्त में उलझे लोगों के युवाओं की भीड बढ़ा दी है। इनके जीवन में मानवीय सरोकार और सामाजिक संवेदनाओं का लगातार क्षरण हो रहा है। ईर्ष्या और कुंठा के दो किनारों के बीच इनकी जीवन गंगा में भंवर ही भंवर है। इसको जारी रखना अब असंभव भी हो चुका है क्योंकि शिक्षा केंद्र स्वयं नागरिक निर्माण की भ्रष्टाचारी संभ्रांत वर्ग पैदा करने के अपराधी सिद्ध हो चुके है।

कुछ वर्षों पूर्व सर्वोच्च न्यायालय ने ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त चौवालिस डीम्ड विश्वविद्यालयों को अवैध, अनैतिक और अवैज्ञानिक घोषित करते हुए इनकों बंद करने का निर्देश दिया था। दर्जनों विश्वविद्यालयों पर आर्थिक और शैक्षणिक कदाचार के मुकदमें चल रहे है। कई कुलपति और प्रधानाध्यापक विभिन्न राज्यों के जेलखानों में अपने पापों की सजा का इंतजार कर रहे है। इसी के समानांतर देश भर में शिक्षा बचाओं की गुहार लगाई जा रही है।

चाहिए शिक्षा का ऐसा मॉडल जो सबका रखे ख्याल

वाजपेयी सरकार मे शिक्षा के भावी स्वरूप के निर्धारण के लिए लक्ष्मीपुत्रों की मार्गदर्शक समिति बनाई गई थी । उस समिति ने 90 के दशक में भारतीय उच्च शिक्षा को सिंगापुर जैसे आवारा पूंजी से निर्मित एक बौने मुल्क के रास्ते पर ले चलने की सलह दी थी। चौतरफा विरोध ने वाजपेयी सरकार की आंखें खोली और रिपोर्ट को रद्दी के टोकरी में डालने में ही भलाई समझी गई। फिर मनमोहन सोनिया राज में एक ज्ञान आयोग बनाया गया जिसकी लगाम संचार क्रांति के सिद्ध पुरूष सैम पित्रोदा जी के हाथ में थी। इस आयोग ने यह तो ठीक कहा कि भारत का समूचा शिक्षा तंत्र वैश्विक चुनौतियों के लिए तब तक नाकाफी रहेगा, जब तक हम कम से कम 1000 नए विश्वविद्यालय और 50 हजार नए महाविद्यालय नहीं बना लेते । लेकिन उसका उपाय शिक्षा के व्यवसायीकरण के साथ जोडकर उच्च ज्ञान आयोग ने इसे भारत जैसे उभरते हुए लोकतांत्रिक राष्ट्र के लिए बेमतलब बना दिया। शिक्षा के बाजारीकरण से हम विषमताओं के दलदल में धंसे और गरीबी अमीरी के बीच में पीड़ाग्रस्त विराट भारत के साधनविहीन बहुमत के साथ न्याय नही कर सकेंगें। इसीलिए अब वर्तमान मोदी शासन में अलग अलग राज्यों में अलग अलग कोशिशें हो रही हे। इससे स्त्रियों, दलितो, आदिवासियों और पिछड़े वर्गो के हिंदू और मुसलमानों और ईसाइयों को भी अपने बच्चे बच्चियों को उच्च शिक्षा का अवसर दिलाया जा सकेगा।

इसी के समानांतर उच्च शिक्षा में छोटे किसान, छोटे दस्तकार और छोटे शहरों की जरूरतों के लिए अब तक सरोकार की कमी रही है। इस अभाव को दूर करना भी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था का बड़ी चुनौती है। हम अब अमेरिका और यूरेाप के उच्च शिक्षा के मॉडल को नहीं अपना सकते क्योंकि वह भी इसकों छोड रहे है। बिना समाज द्वारा शिक्षा में पूंजी निवेश किए समाज के संवेदनशील शिक्षित व्यक्तियों को बनाना वैसा ही प्रयास है; जैसे पत्थर को पानी में तैराना। अगर कोई युवक या युवती अपने परिवार

के निजी साधनों के बल पर उच्च शिक्षा पाकर सक्षम और संपन्न बनता है तों उसके मन में अपने समाज और देश के प्रति दायित्व का भाव क्यों होगा ?

सारांशतः हमारी शिक्षा व्यवस्था को विपन्नता और विषमता के दो महादैत्यों को पराजित करने वाली नीतियां चाहिए। जिससे शिक्षा मात्र भौतिक आकांक्षाओं की चेरी न बनकर शिक्षा के सैद्धान्तिककरण पर भी बल दे सके। शिक्षा के प्रति इस प्रकार का संकुचित दृष्टिकोण अपनाकर विवेकशील नागरिकों का निर्माण नहीं किया जा सकता है। अतः शिक्षा को इस प्रकार विकसित किया जाये जिससे समाज को विवेकशील नागरिक प्राप्त होते रहें तभी समाज का संतुलन बना रह सकेगा। यही है सम्पोषणीय शिक्षा जो वर्तमान समाज की अनिवार्य आवश्यकता है।

संदर्भ :

1 Literary Articles of the newspaper, Rashtriya Sahara
2 website visited https://en.wikipedia.org/wiki/Education_in_India
3 http://www.essaysinhindi.com
4 https://khabar.ndtv.com/topic/education-system

रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचार

विनय सिंह
शोध छात्र, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर देश की उन विलक्षण प्रतिभाओं में शामिल रहे हैं जिनका लोहा पूरे विश्व ने माना। साहित्य और कला की इस महान शख्सियत ने शब्दों और रागों की ऐसी बहुआयामी तान छोड़ी कि प्रशासक और सुधीजन आज तक उसकी झंकार सुन गुल रहे हैं। कवि, गद्यकार, और नाटककार के रूप में शब्दों का जादू चलाने वाले टैगोर ने चित्रकारी और संगती रचना के जरिए संवेदनाओं के सूक्ष्म प्रकम्पन से लाखों लोगों के मनोमस्तिष्क को सम्मोहित कर दिया।

रवीन्द्रनाथ टैगोर एक महान कवि, साहित्यकार, समाज सुधारक एवं दार्शनिक ही नहीं थे, अपितु उन्होंने अपने विचारों के द्वारा भारत की जनता को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने के लिये एक महान शिक्षाशास्त्री, शिक्षा विशेषज्ञ के रूप में अपने को स्थापित किया। टैगोर ने देशकाल की सीमाओं को लांघकर विश्व को भारतीय संस्कृति की व्यापकता, उदारता, सहनशीलता एवं आदर्श मूल्यों से परिचित कराया। भारतीय जीवन – दृष्टि से सरोबार एक प्रबल बौद्धिक जिज्ञासा और कला की चेतना ने गुरूदेव के शिक्षा चिन्तन को आकार दिया। वे प्राचीन भारतीय शास्त्रीय ज्ञान, मध्यकालीन वैष्णव और निर्गुण सन्त एवं आचार्यों के साहित्य तथा पश्चिम के साहित्य रोमानी कवियों से प्रभावित थे। अपने समकालीन भारतीय जीवन के आकर्षण, साम्राज्यवाद के हाथों मिल रहे पराभव और पश्चिम के मुकाबले में भारतीय बौद्धिक पिछड़ेपन से चिन्तित गुरूदेव ने अपने शिक्षा दर्शन में तीव्र बौद्धिक जिज्ञासा और गहन आध्यात्मिक एवं सार्वजनिक रूझान को रेखांकित किया।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक विचारों की प्रासांगिकता का आकलन आज की शिक्षा प्रणाली को देखकर किया जा सकता है। गुरूदेव के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता को निहित विषयों के अन्तर्गत व्याख्यापित किया जा रहा है।

प्रकृति केन्द्रित शिक्षाः

टैगोर बालकों को प्रकृति से मिली जीवन्त शिक्षा को अधिक महत्व देते है। केन्द्रित शिक्षा बालकों में वातावरण के प्रति सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है। टैगोर मानते थे कि प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में गुरू–शिष्य परम्परा छात्रों के सर्वांगीण विकास में सहायक है। गुरूदेव ने प्रकृति को महान शिक्षक माना है। उनका विचार था कि प्रकृति हमारा दैनिक जीवन ढालती है, जिसमें सौन्दर्य और प्रसन्नता, समरसता और उल्लास के भाव होते हैं और ये हमें अपने आन्तरिक जीवन पर ध्यान केन्द्रित करने में सहायता देती है। टैगोर का मानना है कि प्रकृति और पुरूष के सहयोग से जीवन की पूर्णता प्रदान किया जा सकती है। टैगोर ने प्रकृति में सौन्दर्य एवं आनन्द, शक्ति और ओज, स्वतन्त्रता तथा आत्मप्रेरणा देखा जिसने मानव जीवन एवं शिक्षा का ओत–प्रोत किया।

टैगोर बच्चों की प्रकृति को ध्यान से रख कर सरस शिक्षा देने की हिमायती थे। वे प्रकृति की गोद में प्रत्यक्ष निरीक्षण द्वारा शिक्षा देकर बच्चों में भावात्मक विकास करना चाहते थे। उन्होंने मानव प्रकृति को समझने और स्वयं को सामाजीकृत करके आगे बढ़ने का सन्देश दिया। टैगोर ने बालक की प्रकृति के आधार पर शिक्षा देने की बात कह कर बाल केन्द्रित शिक्षा का समर्थन किया। वे बालकों की रूचि, रूझान योग्यता का सम्मान करते थे। अतः टैगोर का प्राकृतिक वातावरण में स्थापित विद्यालय तथा बाल प्रकृति पर आधारित शिक्षण आज भी प्रासंगिक है।

भारतीय संस्कृति का पोषण :

टैगोर ने शिक्षा के माध्यम से प्रभावित भारतीय संस्कृति का पूर्ण पोषण किया। वे मानते थे कि विश्व के कल्याण का मार्ग भारतीय संस्कृति का ही है। टैगोर वैदिककालीन शिक्षा के समर्थक थे। वे भारतीय आध्यात्मिक से बहुत प्रभावित थे। टैगोर ने भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार किया। उन्होंने विश्व के अनेक देशों में यात्रा करके भारतीय संस्कृति का प्रचार किया। वे शिक्षा के माध्यम से बालकों में भारतीय संस्कृति को सही ढंग से समझने तथा सम्वर्धन करने की सलाह देते हैं।

गुरूदेव का सबसे बड़ा कार्य प्राचीन भारतीय आदर्श ''अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव'' 'वसुधैव कुटुम्बकम'' को अर्वाचीन आदर्श 'अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव' के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। ये देश विदेश की समस्त भाषाओं, साहित्यों, संस्कृतियों एवं कलाओं को आदर की दृष्टि से देखते थे। इन्होंने अपने द्वारा स्थापित विश्व भारती में देश–विदेश की विशेष, भाषा, साहित्य कला, संगीत, नृत्य की विधाओं के अध्ययन एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था की। इन्होंने विदेशियों की अपनी भारतीय भाषाओं, साहित्यों, संस्कृतियों, धर्म दर्शन, कला, संगीत व नृत्य की विधाओं से परिचित कराया। अतः वर्तमान शिक्षा में उच्च आदर्शों वाली भारतीय संस्कृति की पाठ्यक्रम में उच्चतम स्थान मिलना चाहिये जिससे छात्रों में स्वयं स्फूर्ति तथा आत्म विश्वास के साथ–साथ मानवता का विकास हो सके।

राष्ट्रीयता एवं विश्वबोध की भावना :

गुरूदेव राष्ट्रीय जागरण के अग्रदूत थे, इन्होंने सोते हुये भारत को जगाया था और लोगों में राष्ट्रीय चेतना का मंत्र फूंका था परन्तु वे भविष्य दृष्टा भी थे। इन्होंने समझ लिया था कि भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर सहयोग के बिना कोई राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकेगा। ऊँचा नहीं उठ सकेगा यही कारण है कि इन्होंने राष्ट्रीय भाषा साहित्य,ज्ञान–विज्ञान और धर्म–दर्शन की शिक्षा पर बल दिया। वैसे 'विश्व भारती' सदा से ही भारतीय परम्पराओं की मुख्य संरक्षक रही है। राष्ट्र के प्रति अटूट प्रेम स्वाभाविक था।वह राष्ट्रीयता में मानव जीवन के सौन्दर्य का दर्शन करते थे। उन्होंने शिक्षा के आयोजन में राष्ट्रीयता का व्यापक अर्थ स्वीकार किया क्योंकि समस्त विश्व को मानव राष्ट्र के नाम से पुकारा तथा मानव कल्याण को ही जीवन का परम लक्ष्य माना।यद्यपि संकुचित भौगोलिक सीमाओं का राष्ट्र, राष्ट्र नहीं माना किन्तु शिक्षा को उन्होंने उदार मानव पर आधारित करना चाहा। अतः यह कहना अनुचित न होगा कि उन्होंने मानव प्रेम, राष्ट्रप्रेम की अविरल धारा को प्रवाहित किया। उन्होंने राष्ट्रीयता को आध्यात्मीकरण किया और भौगोलिक सीमाओं को ध्वस्त करके आध्यात्मिक सीमाओं में बांधा और यही है राष्ट्रीय शिक्षा का वह स्वरूप जिसमें टैगोर परम पुरूष की कल्पना में उन्मादित हो उठे तथा राष्ट्रीयता की परिधि से निकलकर अन्तर्राष्ट्रीय हो गये। टैगोर की यही राष्ट्रीयता विश्व बोध को दर्शाती है । अतः भावना का समावेश होना चाहिये। प्राथमिक शिक्षा में शिक्षा का उद्देश्य पाठ्यक्रम में ऐसी ही राष्ट्रीयता की भावना का समावेश होना चाहिये। अतः हम कह सकते है कि टैगोर की राष्ट्रीय शिक्षा आज भी सार्थक एवं प्रासंगिक है।

भौतिकता तथा आध्यात्मिकता में समन्वय :

आज के वैज्ञानिक युग में भौतिकता का बोलबाला है। भौतिकता ने सभी को स्वार्थी बना दिया है। मनुष्य मानसिक रूप से असंतुष्ट एवं अर्न्तद्वन्द्व में जीवन व्यतीत करता है। ऐसे में मनुष्य अपनी समस्त गौरवशाली उपलब्धियों के उपरान्त भी उस चिरपोषित लक्ष्य (आध्यात्मिक उन्नति) तक पहुंचने में असफल ही रहेगें। वैसे इस वैज्ञानिक युग में म केवल आध्यात्मिकता के सहारे जीवन नैया को नहीं खो सकते है। हमें यथार्थ की भूमि पर खड़े होकर भौतिकता तथा आध्यात्मिकता में सामंजस्य स्थापित करना होगा।

टैगोर ने शिक्षा द्वारा मनुष्य के भौतिकता तथा आध्याम्किता दोनों प्रकार के विकास पर समान बल दिया। टैगोर भौतिकता तथा आध्यात्मिकता में सामंजस्य स्थापित किया। इसके लिये उन्होंने पश्चिमी ज्ञान– विज्ञान को महत्व देते हुये भारतीय धर्म दर्शन को महत्वपूर्ण माना। जिससे मानव जीवन का कोई भी पक्ष अछूता न रह सके। टैगोर ने आज के भौतिकवादी युग में आध्यात्म को जनकल्याण के लिये आवश्यक माना। टैगोर ऐसी शिक्षा का समर्थन करते थे जो बालक को भौतिक और वैज्ञानिक उन्नति के पथ पर अवलोकित करते हुये मानवीय व्यक्तित्व में आध्यात्मिक गुण एवं नैतिक गम्भीरता का आयाम प्रदान करने में सहायता प्रदान करें। अतः आज के वैज्ञानिक युग में आध्यात्म द्वारा नैतिकता का विकास करना अति प्रासंगिक है।

शिक्षक और शिक्षार्थी :

आज के भौतिकवादी युग में छात्रों में हिंसा व दुराचार की प्रवृत्तियॉ अधिक देखी जाती है। छात्र आपस में संघर्ष करते तथा शिक्षकों का अनादर करते हुये देखे जाते हैं। शिक्षक भी अपनी गरिमा खोता जा रहा है। उसमें ज्ञान का अभाव तो है ही वह चारित्रिक रूप से कमजोर पाया जाता है।

अनेक प्रकार के व्यसनों से युक्त शिक्षक समाज के लिये अभिशाप है। शिक्षक – छात्र सम्बन्ध भी व्यवसायिक हो गया है जो शिक्षा के लिये शुभ संकेत नहीं है।

टैगोर वैदिक कालीन शिक्षा के समर्थक थे वे शिक्षक और छात्रों से ब्रहमचर्य व्रत का पालन करने की अपेक्षा करते हैं। ब्रहमचर्य व्रत में इन्द्रिय विग्रह, मन, वचन व कर्म को शुद्धि तथा सादा जीवन एवं प्राकृतिक जीवन का विशेष महत्व है। टैगोर मानते थे कि प्रकृतिक वातावरण में शिक्षा न देने के कारण छात्रों के अन्दर अनेक प्रकार के दुर्गुण आते जा रहे हैं। जिससे प्रत्येक स्तर पर शिक्षा न देने के कारण छात्रों के अन्दर अनेक प्रकार के दुर्गुण आते जा रहे हें। प्रत्येक स्तर पर शिक्षा में अनुशासन की समस्या बनी हुयी है । टैगोर के अनुसार शिक्षक, ज्ञानी, ब्रहमचारी, चरित्रवान तथा आचरण वाला होना चाहिये। वे छात्रों से यह अपेक्षा करते है कि वे व्यवहार में विनम्र, गुरू के प्रति श्रद्धावान नियम व आदेशों का पालन करने वाला, प्रकृति एवं सौन्दर्य का उपासक तथा भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार के ज्ञान का इच्छुक होना चाहिये। टैगोर शिक्षक और छात्र के बीच पिता–पुत्र का सम्बन्ध को स्वीकार करते है जो छात्रों को हमेशा सन्मार्ग तथा सर्वांगीण विकास की ओर अग्रसर कर सके। टैगोर की शिक्षक–शिक्षार्थी संकल्पना वर्तमान परिदृश्य में समीचीन एवं प्रासंगिक जान पड़ती है।

सारांशतः हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि रवीन्द्रनाथ टैगोर की शैक्षिक विचारधारा के ऐसे महत्वपूर्ण तत्व है जिनके द्वारा भारतीय शिक्षा प्रणाली में आमूल चूल परिवर्तन लाये जा सकते हैं, जिससे भारतीय शिक्षा प्रणाली को वर्तमान परिवेश में सार्थकता प्रदान की जा सकती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :

1– गुप्त, लक्ष्मी नारायणः ''महान भारतीय शिक्षाशास्त्री'' इलाहाबाद, कैलाश प्रकाशन, 1912।

2– जायसवाल सीताराम : ''महान शिक्षाशास्त्री'' वाराणसी नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स पब्लिकेशन, 1969।

3– जोशी, इलाचन्द्रः ''विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर'', इलाहाबाद, राजकमल प्रकाशन, 1956।

4– नरवणे, विश्वनाथ, ''आधुनिक भारतीय चिन्तन'' नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन, 2003।

5– पाण्डेय, रामशकलः ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'' आगरा विनोद पुस्तक मंदिर, 2004 ।

6– पाण्डेय, रामशकलः ''प्राचीन भारत के शिक्षा मनीषी '', इलाहाबाद पुस्तक भवन, 1986।

7– पाण्डेय, शिवमोहन : ''राष्ट्रीय शिक्षाधारा के प्रवर्तक'' इलाहाबाद, अग्रवाल प्रेस।

8– आशुतोष बनर्जी, उत्पलः जिन्दगी की किताब रवीन्द्रनाथ टैगोर, अहा जिन्दगी, दिल्ली राजेन्द्र प्लेस, मई, 2011।

9– वर्मा सरोज कुमार : ''रवीन्द्रनाथ टैगोर'' आसमा के पते पांख पर दिखनाः योजना, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, मई, 2011 ।

10– शर्मा, श्रीराम, ''रविन्द्रनाथ टैगोर'' मथुरा, युग निर्माण योजना, 2009